UDGAM VIGYATI, Volume 2, 2015, (November)
Online ISSN 2455-2488
Page No. 185-187

"पर्यावरण प्रबंधन एवं धारणीय विकास"

डॉ. संध्या गोयल
सहायक प्रध्यापक राजनीति विज्ञान
श्री अटल बिहारी वाजपेयी, शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय इन्दौर (म.प्र.)

सारांश
एक देश का विकास वहां विद्यमान प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करता है व प्राकृतिक संसाधन जीव–जन्तु एवं मानव पर्यावरण की देन हैं परन्तु वर्तमान में विकास की अंधी दौड़ ने पर्यावरण में असुतंलन पैदा किया है। अतः विश्व स्तर पर पर्यावरणीय संरक्षण की दिशा में प्रयास किये जाने महत्वपूर्ण हैं। इसी के साथ औद्योगिक विकास भी जरूरी है। पर्यावरण संरक्षण एवं विकास के अंतर्संबंध को दृष्टिगत रखते हुए धारणीय या पौषणीय विकास की दिशा में हमें आगे बढ़ना अति आवश्यक है और यह कार्य पर्यावरण प्रबंध के द्वारा किया जा सकता है। पर्यावरण प्रबंध का अर्थ हैं – पर्यावरणीय संस्थाओं का विवेकपूर्ण दोहन एवं उचित उपयोग। ''प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हुए मानव समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।''

एक देश का विकास वहां विद्यमान प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करता है व प्राकृतिक संसाधन जीव–जन्तु एवं मानव पर्यावरण की देन हैं परन्तु वर्तमान में विकास की अंधी दौड़ ने पर्यावरण में असुतंलन पैदा किया है। अतः विश्व स्तर पर पर्यावरणीय संरक्षण की दिशा में प्रयास किये जाने महत्वपूर्ण हैं। इसी के साथ औद्योगिक विकास भी जरूरी है। पर्यावरण संरक्षण एवं विकास के अंतर्संबंध को दृष्टिगत रखते हुए धारणीय या पौषणीय विकास की दिशा में हमें आगे बढ़ना अति आवश्यक है और यह कार्य पर्यावरण प्रबंध के द्वारा किया जा सकता है। पर्यावरण प्रबंध का अर्थ हैं – पर्यावरणीय संस्थाओं का विवेकपूर्ण दोहन एवं उचित उपयोग। ''प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हुए मानव समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।''

प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एवं समाज की आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु हमें पर्यावरण प्रबंधन करना होगा। इस हेतु जरूरी है कि प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन एवं उपयोग हो, प्राकृतिक घटकों में पुनर्जनन, पुनः चक्रीकरण, संतुलन बना रहे, वे पुनः विकसित हों, नवीन विकल्पों की खोज हो, पर्यावरण अवनयन न हो, प्रदूषण न्यूनतम हो, शासकीय नियमों का पालन हो एवं समाज अपनी आवश्यकताऐं नियंत्रित रखे। महात्मा गांधी ने कहा था – ''प्रकृति में मनुष्य की आवश्यकता पूर्ति की शक्ति है पर उसकी लालच की पूर्ति वह नहीं कर सकती।''

भविष्य में मानव जीवन सुरक्षित रहे इसके लिए विकास एवं पर्यावरण दोनों ही आवश्यक हैं। यही संपोषणीय विकास है। सम्पोषित विकास का अर्थ ऐसे विकास से है जो वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भावी पीढ़ियों की इन आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता में कमी नहीं करता अर्थात प्राकृतिक संसाधनों का दोहन होने पर उसकी गुणवत्ता प्रभावित न हो। जीवन धारणीय विकास से आशय है वह विकास जो मानव जीवन की उत्तमता को बिना पर्यावरण को हानि पहुँचाये, बनाये रखे। अर्थात प्राकृतिक संसाधनों के साथ ऐसा सामंजस्य जिससे संसाधनों को कोई हानि न हो तथा उनका उपयोग भी हो जाए। पर्यावरण की समस्याओं को समझाने एवं उनके समाधान के लिए सम्पूर्ण विश्व में विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संगठनों का गठन किया जा रहा है। परन्तु पर्यावरण के संरक्षण एवं उसकी समस्याओं को दूर करने में प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिगत भूमिका का अत्यधिक

UDGAM VIGYATI, Volume 2, 2015, (November)
Online ISSN 2455-2488
Page No. 185-187

महत्व है। यदि मानव अपने विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का बुद्धिमता पूर्ण उपयोग करे तो पर्यावरण संबंधी समस्याऐं उत्पन्न ही न हों।

सतत् विकास का एक अवधारणा के रूप में विकास 1987 में ब्रंटलैंड रिपोर्ट के साथ हुआ। ब्रंटलैंड रिपोर्ट ने सतत् विकास के तीन मूलभूत तत्वों पर प्रकाश डाला है –

1. पर्यावरण
2. अर्थव्यवस्था
3. समाज।

ब्राजील में 1992 में रियो–डी–जेनेरो में पर्यावरण पर सम्मेलन बुलाया गया। यह सबसे बड़ा पर्यावरणीय सम्मेलन था। इस सम्मेलन द्वारा जैविक भिन्नता पर समझौता, जलवायु परिवर्तन पर संस्थागत सम्मेलन, वन प्रबंध के सिद्धांत, पर्यावरण तथा विकास से संबंधित रियो उद्घोषणा और एजेण्डा–21 जिसमें सम्पोषित विकास की अवधारणा प्रभावी ढंग से प्रस्तुत की गई।

पर्यावरण असंतुलन ही प्राकृतिक आपदाओं का प्रमुख कारण है। आपदाओं के असर को कम करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समझौते पर हस्ताक्षर किये गये। जिसे 169 देशों ने माना लेकिन इसके साथ यह सोचना भी आवश्यक है कि कहीं इन बढ़ती आपदाओं का कारण कहीं भैतिक विकास के लिए की गई प्रक्रियाऐं तो नहीं हैं। विकास की योजना बनाते समय हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि हम विकास की क्या कीमत चुका रहे हैं।

भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने मानव तथा पर्यावरण विषय पर स्टाकहोम सम्मेलन (1972) में कहा था – ''धनी देश लगातार हमारी गरीबी को संदेह की दृष्टि से देखते हैं दूसरी और वे ही हमें उनकी स्वयं की प्रणालियों के बारे में आगाह करते हैं। हम पर्यावरण को और अधिक नष्ट नहीं करना चाहते। फिर भी हम लोगों की भयंकर गरीबी को पलभर भी भुला नहीं सकते। क्या निर्धनता और अभाव भीषणतम प्रदूषण नहीं है।

उदाहरणार्थ – जब तक हम आदिवासियों को और हमारे जंगलों में या उनके आसपास रहने वाले लोगों को रोजगार और दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुओं को खरीदने की शक्ति नहीं दे देते तब तक हम उन्हें भोजन तथा जीवन निर्वाह के लिये वनों को काटना या चोरी छिपे शिकार करने से नहीं रोक सकते।

जब वे स्वयं को वंचित महसूस करने हैं तो हम उनसे प्राणियों के संरक्षण का आग्रह कैसे कर सकते हैं। हम गांवों और गंदी बस्तियों में रहने वालों लोगों से कैसे कह सकते हैं कि वे समुद्र, नदियों तथा वायु को स्वच्छ रखें जबकि उनका स्वयं का जीवन अपने स्थान पर प्रदूषित हैं। गरीबी की स्थिति में पर्यावरण सुधार नहीं सो सकता और न विद्वान तथा प्रौद्योगिकीके उपयोग के बिना गरीबी को दूर किया जा सकता है।'' गरीबी और जनसंख्या वृद्धि एक बड़ी समस्या है। इन्हें दूर करना ही होगा। इसके अलावा पर्यावरण और प्राणियों की रक्षा भी हमें करनी होगी। हम कह सकते हैं कि सभी महत्वपूर्ण निर्णयों में पर्यावरण सुरक्षा एवं धारणीय विकास को ध्यान में रखना होगा।

विकास का एक चरण औद्योगीकरण है। औद्योगिक प्रगति का परिणाम प्रदूषण है। एक उद्योग में कम से कम निम्न प्रक्रिया तो होती ही है –

1. विषैली गैसों का चिमनियों से उत्सर्जन।
2. चिमनियों में प्रयुक्त ईंधनों के अवशेष।
3. औद्योगिक अवशेष।
4. उद्योगों के काम में आये हुए जल का बहिस्त्राव।

UDGAM VIGYATI, Volume 2, 2015, (November)
Online ISSN 2455-2488
Page No. 185-187

ये सभी हमारे पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय मानव पर्यावरण सम्मेलन स्टाकहोम में पर्यावरण को पूरे विश्व की समस्याओं पर गहन अध्ययन किया गया। लगभग 100 देशों के प्रतिनिधियों ने इसमें भाग लिया। 26 सूत्री महाधिकार पत्र यहीं जारी किया गया जिसमें सभी देशों से यह अपेक्षा की गई कि अपने–अपने देश की पर्यावरणीय स्थितियों का वह अध्ययन करें व पर्यावरण संबंधी कार्ययोजना तैयार कर उसे क्रियान्वित करायें। यह कार्य पर्यावरण प्रबंधन द्वारा ही संभव है।

विकास क्रियाओं के साथ पर्यावरणीय नियोजन जरूरी है जिस हेतु भूसंसाधनों का समुचित उपयोग, एक बार उपयोग में आने के उपरांत समाप्त हो जाने वाले संसाधनों का संरक्षण, पर्यावरण की गुणवत्ता का विकास, पर्यावरण प्रबंध में संसाधनों के संरक्षण, उनके दीर्घकालिक उपयोग और अधिकाधिक उपयोग की योजना समाहित है, मुख्य उत्पाद के साथ सह–उत्पाद का समुचित उपयोग भी पर्यावरणीय प्रबंध है।

प्रकृति स्वयं पर्यावरण के अंगों की क्षतिपूर्ति करती है। जब यह क्षति प्रकृति की सीमा से अधिक हो जाती है तो इसे क्षयीकरण का दुष्चक्र कहते हैं। अतः सतत् विकास हेतु पर्यावरण सुरक्षा के उपयों द्वारा प्रकृति को सहयोग करने पर स्थायी या टिकाऊ विकास संभव है। यही जीवन धारणीय विकास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. अवस्थी डॉ. नरेन्द्र मोहन, पर्यावरणीय अध्ययन एवं प्रबंध म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृ. 238
2. बाना वीणा तथा राजीव, पर्यावरण शिक्षा रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर, पृ. 410–411
3. जैन डॉ. मंजु, पर्यावरण प्रबंध, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2010, पृ. 182
4. वही, पृ. 229
5. जैन प्रो. रमेश, पर्यावरण मीडिया एवं कानून, सबलाइम पब्लिकेशन, जयपुर, पृ. 07
6. मिश्र लक्ष्मी नारायण, ''विकास की कीमत'', पर्यावरण विकास, पर्यावरण एवं विकास पर राष्ट्रीय मासिक पत्रिको, पर्यावरण संरक्षण अनुसंधान एवं विकास केन्द्र, इन्दौर म.प्र., वर्ष 13, अंक 7, जुलाई 2012
7. रघुवंशी डॉ. अरूण एवं रधुवंशी डॉ. चन्द्रलेखा, पर्यावरण तथा प्रदूषण, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृ. 229